जयशंकर प्रसाद जी के नाटकों में अभिव्यक्त कर्मवाद और नियति

हिमाँशु शर्मा
अबोहर (पंजाब)

साराँश

वर्तमान समय में वैज्ञानिक बौद्धिकवादिता के प्रचार के आकर नियति को मानव जीवन में गौण एवं अविचारणीय तत्व स्वीकार किया जाता है। कर्मवाद आज भी अपना महत्त्व बनाये हुए है। परन्तु वर्त्तमान समय में भारतीय जनमानस स्वयं को अपने कर्मों एवं उनके परिणामों का भाग्य विधाता मान कर मानसिक दबाव एवं तनाव का भक्ष्य हो जीवन का आनंद विस्मृत करता जा रहा है। प्रसाद जी द्वारा अपने नाटकों में कर्म और नियति अथवा प्रारब्ध के अन्तर्सम्बन्धों को पुनर्व्याख्यायित एवं पुनर्स्थापित कर मानव को सृष्टि की वृहद योजना का अत्यंत सूक्ष्म अंग स्वीकार किया है तथा उसके जीवन संघर्ष जनित नैराश्य, हताशा, कुंठा एवं क्रंदन विलाप को अप्रासंगिक सिद्ध कर कर्म और नियति को मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी अभिव्यक्ति प्रदान करने की चेष्टा की है।

प्रमुख शब्द :— कर्मवाद, नियति, शैवागम, बौद्ध दर्शन, आनंदवाद, भारतीय दर्शन

कर्मवाद भारतीय दार्शनिक विचारधाराओं का प्रतिनिधि, क्रियात्मक अथवा प्रत्यक्ष अवलोकित पक्ष है जिसने भारतीय जनमानस के मानस एवं अंतर्मन में अप्रतिम एवं अविच्छिन्न प्रतिष्ठा स्थापित की है। भारतीय दर्शन मानव जीवन का सार उसके क्रियाशील होने स्थापित कर जीवन में गतिशीलता को मानता है, ब्राह्मण दर्शन में कर्म के तीन प्रकार कहे गए हैं — क्रियमाण, संचित और प्रारब्ध। भोगोन्मुख कर्म को प्रारब्ध कहते हैं, नियति क्रियमाण कर्म का नियंत्रण करती है पर प्रारब्ध कर्म से वह स्वयं नियंत्रित होती है। क्रियमाण, सचित और प्रारब्ध कार्य का चक्र चला करता है।[१] गीता का कर्मवाद निष्काम कर्म पर बल देता है, तो बौद्ध दर्शन में कर्म दु:ख निवृति का साधन भी है। जैन दर्शन अहिंसामूलक कर्मव्यवहार पर बल देता है। परन्तु विभिन्न भारतीय दर्शनों में कर्म का अस्तित्व अक्षुण्ण ही है। प्रसाद जी द्वारा अनुपालित शैवागम; प्रत्यभिज्ञा दर्शनद्ध में भी कर्म पर चर्चा है, "शैवागम में पांच तत्व स्वीकृत हैं, जिन्हें पंचकंचुक की संज्ञा दी गयी है — राग, कला, अविधा और नियति.....प्रसाद जी ने कर्मवाद की नियति और शैवागम की नियति, जो स्वातंत्र्य शक्ति को संकुचित करती है, स्वीकार किया है। इसके मूल में शिवेच्छा है।"[२] प्रसाद जी के कर्मवाद पर ब्राह्मण एवं बौद्ध दर्शन का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। उनके नाटकों में अभिव्यक्त कर्मवाद स्वरूप सामाजिक, लोकहितकारी, बहुजन हिताय बहुजन सुखाय से भी उत्कृष्ट सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया: के वैश्विक स्तर पर सुशोभित करते हैं, "विश्व साम्य उसकी अखंडता तथा निष्काम कर्म द्वारा संसार में प्रवृत होने का वर्णन विविध परिस्थितियों में भिन्न भिन्न पात्रों द्वारा प्रसाद जी ने बार बार किया है। ब्राह्मण और बौद्ध दर्शन के गहन अध्ययन और मनन के बाद उन्होंने कर्मवाद के व्यवहारिक पक्ष को जिसमें लोकहित, विश्व मानवता तथा विश्व मैत्री के भाव निहित हैं, अपनाया है।"[३]

भारतीय संस्कृति द्वारा स्थापित निष्काम कर्मवाद के सिद्धांत को मानवतावाद एवं विकासवाद की अवधारणा की समबद्धता को प्रतिपादित करते हुए प्रसाद जी ने जन्मेजय का नागयज्ञ नाटक में आनंद प्राप्ति एवं सृष्टि के सफल संचालन में पुरुषार्थ की भूमिका को श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के संवादों के माध्यम से स्पष्ट किया है," पुरुषार्थ करो, जड़ता हटाओ। इस वन्य प्रान्त में मानवता का

विकास करो, जिससे आनंद फैले। सृष्टि को सफल बनाओ।"[४] प्रसाद जी नाटकों में मानव को सद्कर्म करने तथा 'चरैवेति चरैवेति' के भारतीय दार्शनिक मूल्यों को चन्द्रगुप्त नाटक में दाण्डयायन के कथन के द्वारा स्पष्ट कर मानव जीवन की गतिशीलता का महत्त्व स्थापित किया है, "पवन एक क्षण विश्राम नहीं लेता, सिंधु की जलधारा बही जा रही है, बादलों के नीचे पक्षियों का झुण्ड उड़ा जा रहा है, प्रत्येक परमाणु न जाने किस आकर्षण में खिंचे चले जा रहे हैं।[५] इसी दर्शन का प्रतिपादन करती कमला स्कंदगुप्त नाटक में स्कंदगुप्त को सद्कर्म करने के लिए प्रेरित करती है, "कौन कहता है तुम अकेले हो। समग्र संसार तुम्हारे साथ है। सहानुभूति को जागृत करो। यदि भविष्य से डरते हो कि तुम्हारा पतन ही समीप है तो तुम उस अनिवार्य रूप से स्रोत से लड़ जाओ। तुम्हारी प्रचंड और विश्वासपूर्ण पदाघात से विंध्य के समान कोई शैल उठ खड़ा होगा जो उसे विघ्न स्रोत को लौटा देगा। राम और कृष्ण के समान क्या तुम भी अवतार नहीं हो सकते? समझ लो जो अपने कर्मों को ईश्वर का कर्म समझकर करता है वह ईश्वर का अवतार है। उठो स्कंद, आसुरी वृत्तियों का नाश करो, सोने वालों को जगाओ और रोने वालों को हंसाओं, आर्यावर्त्त तुम्हारे साथ होगा और आर्य पताका के नीचे समग्र विश्व होगा, वीर"।[६] "स्कन्द बौद्ध दर्शन के दुःखवाद और संसार की क्षणभंगुरता में साथ साथ कर्मवाद के सिद्धांत से भी प्रभावित दिखाई देता है। वह बौद्धों के निर्वाण और योगियों की समाधि की कामना करता है। उसकी यह अभिलाषा है की नीति और सदाचार का आश्रय पाकर गुप्त साम्राज्य हराभरा रहे और कोई इसका योग्य संरक्षक हो,वह स्वयं उसे निष्कंटक कर पृथक हो जाना चाहता है। उसका यह विचार निष्काम कर्मयोग के अनुकूल है।"[७] भारतीय दर्शन में कर्म मनुष्य के लिए अतीत के दुष्कर्मों के पश्चाताप एवं दुर्गुणों के परिष्कार का एक मात्र साधन भी ह। कर्म द्वारा अर्जित पाप राशि का निस्तारण केवल सुकर्मों द्वारा अर्जित पुण्यफल से हो सकता है। इस प्रकार वह अपनी नियति के दासत्व से भी मुक्त हो सकता है। प्रसादजी ने इसे उत्तंक के शब्दों में स्पष्ट किया है, "अपने कलंक के लिए रोने से क्या वह छूट जाएगा? उसके बदले में सुकर्म करने होंगे। सम्राट! मनुष्य जब तक यह रहस्य नहीं जानता, तभी तक वह नियति का दास बना रहता है।"[८] प्रसाद जी नियतिवादी भी है। उनके नाट्य साहित्य में नियति मानव जीवन एवं सृष्टि चक्र की नियामक, नियंत्रित, प्रेरक एवं निर्देशक शक्ति है, जो जीवन में घटित घटनाओं, स्थितियों एवं परिस्थितयों के लिए उत्तदायी है तथा मानव के कर्म के सूत्र भी इसी नियति के हाथों में ही हैं। शैवागम के कर्म के क्रियमाण रूप को प्रारब्ध से सम्बद्ध कर कर्म एवं नियति के सापेक्षिक अंतर्संबंधों को व्याख्यायित किया गया है तथा इस दर्शन के आधार पर प्रसाद जी भी प्रत्यभिज्ञ दर्शन में कर्म, नियति एवं मानव जीवन के अंतर्संबंधों को नाटकों बहुधा स्थानों पर चिह्नित करते हैं। जन्मेजय का नागयज्ञ नाटक में प्रसाद जी ने अनेक स्थानों पर मनुष्य को नियति का अनुचर अथवा दास कहा है। ऋषि जरत्कारु जन्मेजय को कहता है कि,"अदृष्ट की लिपि ही सब कुछ कराती है।...जन्मेजय मैं तुमको क्षमा करता हूँ, किन्तु कर्मफल तो स्वयं समीप आते हैं। उनसे भाग कर कोई बच नहीं सकता।....स्मरण रखना, मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है।"[९] इस क्रम में जन्मेजय का स्वगत कथन है "मनुष्य क्या है? प्रकृति का अनुचर और नियति का दास अथवा उसकी क्रीडा का उपकरण! फिर क्या। वह अपने आप को कुछ समझता है?"[१०] जन्मेजय के विपरीत अजातशत्रु नाटक में जीवक भी स्वयं को नियति के अधीन मनाता है, परन्तु वह कर्म को नियति अधिक अधिमान देता हुआ कर्म पथ पर अग्रसर हो राजकार्य भार त्याग बिम्बिसार के साथ वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करने का निर्णय लेता है,"नियति की डोरी पकड़ कर मैं निर्भय कर्म कूप में कूद सकता हूँ। क्योंकि मुझे विश्वास है कि जो होना है, वह तो होगा ही, फिर कायर क्यों बनूँ — कर्म से क्यों विरक्त रहूँ—मैं इस उच्छृंखल राजशक्ति का विरोधी होकर आपकी सेवा करने आया हूँ।"[११] मागन्धी "वाह री नियति! कैसे कैसे दृश्य देखने में आए।"[१२] इसी प्रकार चंद्रगुप्त नाटक में मगध सम्राट के अत्याचारों एवं विनाश के उपरांत भी शकटार बच जाता है तथा अपनी जीवन रक्षा में भी नियति को सम्राट के अत्याचारों से

प्रबल बताता कहता है, "जीवित हूँ नन्द! नियति सम्राटों से भी प्रबल है।"[१३] प्रसाद की नियति मनुष्य को अकर्मण्य, पलायनवादी अथवा निराशा का बोध न करवा कर मनुष्य को कर्म करने के किये प्रेरित करती है। जन्मेजय का नागयज्ञ नाटक में व्यास भी नियति के नियंत्रक एवं निर्देशक रूप को चित्रित करते हुए मानव क्रियाओं व् कर्मों तथा उसकी परिणीति को भी नियति आश्रित सिद्ध किया है, "दम्भ और अहंकार से पूर्ण मनुष्य अदृष्ट शक्ति के क्रीड़ा कंदुक है। अंधनियति कर्तव्य मद से मत्त मनुष्यों की कर्म शक्ति को अनुचर बनाकर अपना कार्य कराती है और ऐसे ही क्रांति के समय विराट का वर्गीकरण होता है।"[१४]

संदर्भ

1. पांडेय, रामसेवक, प्रसाद की नाट्य कला पाश्चात्य और भारतीय, पृष्ठ— १६८
2. पांडेय, रामसेवक, प्रसाद की नाट्य कला पाश्चात्य और भारतीय, पृष्ठ— १६८
3. पांडेय, रामसेवक, प्रसाद की नाट्य कला पाश्चात्य और भारतीय, पृष्ठ— १६२
4. प्रसाद, जयशंकर; जन्मेजय का नागयज्ञ, अंक:—१, दृश्य:—१
5. प्रसाद, जयशंकर; चन्द्रगुप्त, अंक:—१, दृश्य:—११
6. प्रसाद, जयशंकर; स्कंदगुप्त, अंक—४, दृश्य— ७, पृष्ठ—१४५
7. पांडेय, रामसेवक, प्रसाद की नाट्यकला पाश्चात्य और भारतीय, पृष्ठ— १६५
8. प्रसाद, जयशंकर; जन्मेजय का नागयज्ञ , अंक—२, दृश्य —३
9. प्रसाद, जयशंकर; जन्मेजय का नागयज्ञ, अंक:— १, दृश्य:—७
10. प्रसाद, जयशंकर; जन्मेजय का नागयज्ञ, अंक—२, दृश्य—१, पृष्ठ:—३१
11. प्रसाद, जयशंकर; अजातशत्रु, अंक—१, दृश्य—४, पृष्ठ:—१४
12. प्रसाद, जयशंकर; अजातशत्रु, अंक—३, दृश्य—७, पृष्ठ:—९६
13. प्रसाद, जयशंकर; चन्द्रगुप्त, अंक—३, दृश्य —९, पृष्ठ:—२००
14. प्रसाद, जयशंकर; जन्मेजय का नागयज्ञ, अंक:—३, दृश्य:—१, पृष्ठ:—५०

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com